भूमिका

कविता का मुख्य उद्देश्य, कम से कम भारतीय आलोचना पद्धति में, लोकमंगल करना माना गया है। इस मान्यता के बरअक्स ही हिन्दी परंपरा में यह लगातार देखने में चला आ रहा है कि लोकमंगल को ही मुख्य उद्देश्य मानकर कविता करने वाले कवियों को साहित्य की मुख्य धारा से अलग करने का भरसक प्रयास किया जाता रहा है। काव्य के क्षेत्र में लोकमंगलवाद की स्थापना करने वाले हिन्दी-साहित्य के पुरोधा आलोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल घोर-लोकमंगलवादी कवि कबीरदास को साहित्य में उनका उचित स्थान दिलाने में कोई पसोपेश नहीं करते हैं, यद्यपि बाद में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस काम को बख़ूबी अंज़ाम दिया था। आचार्य शुक्ल के कबीर को पद-प्रतिष्ठा न दिला सकने के कारणों की एक झलक उनके इस कथन में मिलती है-"कबीर ने अपनी झाड़-फटकार द्वारा हिंदुओं और मुसलमानों के कट्टरपन को जो दूर करने का प्रयास किया वह अधिकतर चिढ़ानेवाला सिद्ध हुआ, हृदय को स्पर्श करने वाला नहीं। मनुष्य-मनुष्य के बीच जो रागात्मक संबंध है वह उसके द्वारा व्यक्त न हुआ। अपने नित्य के जीवन में जिस हृदयाभास का अनुभव मनुष्य कभी-कभी किया करता है ,उसकी अभिव्यंजना उससे न हुई।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास ,पृष्ठ-59)। यहाँ बात यह भी विचारणीय है कि कबीर मुक्तक परंपरा के कवि थे , प्रबंध के नहीं ; और मुक्तकों में हृदय को स्पर्श करने की अपनी एक अलग प्रक्रिया भी हुआ करती है। रामचन्द्र शुक्ल के कथन में सत्यांश है, कबीर हिंदू और मुसलमानों को चिढ़ा रहे थे , पर उनके काव्य का बड़ा अंश हृदय को भी स्पर्श करने वाला है।

मुक्तक कविता के विषय में एक ख़ास बात कहने की यह है कि कविता के शास्त्रीय प्रतिमानों के हिसाब से इसमें आश्रय की भूमिका अमूमन कवि की ही होती है—सीधे-सीधे ,बिना किसी लाग-लपेट के। पाश्चात्य आलोचक टी० एस० एलियट ने भी इस चीज़ को अपने निबंध 'कविता के तीन स्वर' में अच्छी तरह समझाया है ,और इस प्रकार की कविता को प्रथम स्वर वाली कविताओं में स्थान देते हुए इसकी प्रकृति लिरिकल या प्रगीतात्मक स्वीकार की है। हिंदी कविता की मुक्तक परंपरा पर यदि नज़र दौड़ाई जाय तो ऐसी जगहें बहुत कम मिलेंगी जहाँ मुक्तक कवियों ने पात्र-सर्जन किया हो, अन्यथा कवि उसमें सीधे-सीधे पात्र रूप में मौजूद रहा है। ग़ज़ल जैसी विधा के विषय में तो इस संदर्भ में किसी शक की गुंजाइश ही नहीं छूटती। शायद इसीलिए कवियों ने अपनी बात जनता तक सुगमता से पहुँचाने के लिए इसका सहारा लिया—चाहे माधुर्य-भावों की अभिव्यक्ति का मामला हो या आक्रोशित-भावों की अभिव्यक्ति का ; यद्यपि ग़ज़ल की शुरुआत कोमल भावों की अभिव्यक्ति से शुरू हुई थी और लंबे समय

तक इस पर इसी का आधिपत्य रहा। ख़ैर, ऐसी माधुर्य भाव वाली कविताओं का आलंबन ऐसी सांसारिक वस्तुएँ या दृश्य होते हैं जो आश्रय, यानी कवि को प्रिय लगते हैं ; जबकि आक्रोशधर्मी-काव्यों में आश्रय-कवि का आलंबन ऐसी सांसारिक वस्तुएँ, दृश्य या घटनाएँ होती हैं जो अवांछनीय होती हैं, अतः कवि में आक्रोश उत्पन्न करती हैं। इन्हीं आक्रोशित भावों की अभिव्यक्ति वह अपने काव्य में करता है।

s हिंदी की आलोचनात्मक प्रक्रिया में मुक्तक-आक्रोशित कवियों को उतना नहीं पसंद किया गया जितना मुक्तक-माधुर्य कवियों को। यहाँ मामला वही 'हृदय स्पर्श करने' वाले भावों की अभिव्यक्ति का रह जाता है। इस संदर्भ में एक बात यह स्पष्ट है कि माधुर्यात्मक-भावों का आकर्षण आक्रोशित भावों की अपेक्षा अधिक होता है। और ऐसा साहित्य किसी विचारधारा से न संबद्ध रहने के कारण सबको आकर्षित करता है—अमीर को, ग़रीब को, सामान्य को, सबको को; क्योंकि सभी भाव सभी मनुष्यों में समान रूप से रहते हैं। पर मुक्तक आक्रोशात्मक काव्य किसी न किसी विचारधारा को अपने अंदर समेटे रहता है, और विचारधाराएँ सबकी एक समान नहीं होतीं अतः आक्रोशित-मुक्तक सबको समान रूप से नहीं आकर्षित कर सकते। सीधे-सीधे कहा जा सकता है कि घोर आर्थिक ,सामाजिक असमानता वाले देश या समाज के लोगों से एक-जैसे हृदय भी रखने की आशा रखना बेमानी है, विचार तो दूर की बात है। और आक्रोशित कविता उन्हें कैसे अच्छी लग सकती है जो इसके आलंबन हैं ! इसके अलावा भी 'मनुष्य-मनुष्य के बीच जो रागात्मक-संबंध है' यदि वही बरकरार रहता तो देश व समाज के नागरिकों के बीच इतनी आर्थिक, सामाजिक व अन्य असमानताएँ कैसे उत्पन्न हो जातीं। जिस समाज में एक आदमी 'सिर्फ़ रोटी से खेलता' हो और दूसरे आदमी को 'भूख है तो सब्र कर' कहा जा रहा हो वहाँ पर मानव-मानव के बीच रागात्मक सम्बन्धों की दुहाई देना आत्मवंचना हो या गैरवंचना ; अंततः है वह वंचना ही। साहित्य-जगत में आम हो चुकी परिभाषा 'साहित्य समाज का दर्पण है' के ही परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो भी यह बेधड़क कहा जा सकता है कि समाज में जब तक हर दृश्य कोमल-कोमल न दिखें तब तक आक्रोशात्मक-दृश्य भी दर्पण में प्रतिबिंबित होते रहेंगे और उनकी आलोचना साहित्यकारों द्वारा होती रहेगी। इस आलोचना की प्रक्रिया से गुजरते हुए साहित्य भावनात्मक कम और विचारात्मक ज्यादा हो जाता है। ऐसी दशा में भी साहित्यकारों को सावधान रहना चाहिए कि साहित्य में शुष्कता न आने पाये, वह महज़ कोरे विचारों का पुंज-मात्र न हो, उसमें भावों और भावनाओं की भी जगह होनी चाहिए।

मेरा एम०फिल०का शोधकार्य 'अदम गोंडवी के काव्य में क्रांति के स्वर' ऐसे ही एक आक्रोश के कवि अदम गोंडवी पर केंद्रित है। अदम गोंडवी का काव्य यद्यपि विचार-प्रधान है, पर ये विचार दुख और पीड़ा की सघन अनुभूतियों से उपजे हैं, अतः उनका काव्य कोरे विचारों के दबाव में शुष्क नहीं हो गया है, उनके विचारों में भाव और भावनाएँ भी मौजूद होती हैं। अदम गोंडवी शायर हैं ,और शायरी की उस

परंपरा को इसके मुकाम तक पहुंचाते नज़र आते हैं जिसकी शुरुआत दुष्यंत कुमार ने की थी। राजनीतिक-सामाजिक विसंगतियों के खिलाफ़ प्रतिरोध का स्वर बुलंद करने वालों की भी हिंदी-साहित्य में लंबी परंपरा रही है, इसे परंपरा-पुरुषों के जिक्र द्वारा मोटे तौर पर इस तरह पेश किया जा सकता है—कबीर—निराला—नागार्जुन—धूमिल—दुष्यंत—अदम।

अदम व्यवस्था की खिलाफ़त में लिखने वाले कवि हैं। आजादी के बाद जिस तरह व्यवस्था के खिलाफ़ साहित्य लिखा गया वह राजनीति से जनता के मोहभंग का ही परिणाम था। स्वतंत्रता के बाद पहले से चला आ रहा आक्रोश का स्वर राजनीतिक विसंगतियों के पर्दाफाश पर केंद्रित हो गया। अदम गोंडवी उन स्वातंत्र्योत्तर कवियों में विशिष्ट स्थान रखते हैं जिन्होंने आम जनता के पक्ष में राजनीति के कठमुल्लों की बड़ी निडर आलोचना की। अदम गोंडवी का जन्म सन् 1947 में उत्तर प्रदेश राज्य के गोंडा जिले में हुआ था। इनकी ग़ज़लों के संग्रह उपलब्ध हैं—'धरती की सतह पर' और 'समय से मुठभेड़' ; यद्यपि दोनों में ग़ज़लें लगभग एक ही हैं , कहीं-कहीं उनका क्रम जरूर बदल गया है।

व्यवस्था-विरोध करने वाले कवियों में एक तथ्य महत्वपूर्ण उभरकर आता है कि जिन कवियों ने व्यवस्था के चलते ज़लालत सही, जिनको इस व्यवस्था में भोजन भी बमुश्किल प्राप्त होता था, वही इसके मुखर विरोधी हुए। कोई ‘पूँजीपति-टाइप’ का कवि कभी सत्ता के विरोध में कविता लिखता नज़र नहीं आया। अतः एलियट का निर्वैयक्तिकता का सिद्धांत यहाँ खारिज होता दिखता है। वैसे भी आज-कल एलियट के सिद्धांत का हवाला देकर जीवन में कुकृत्य कर साहित्य में सुकृत्य का हवाला पेश करने वालों की जमात कुकुरमुत्तों की तरह बढ़ रही है, अतः इस संदर्भ को ध्यान में रखते हुए एलिएट के सिद्धांत का फेल होना ज़रूरी हो गया है। यह एक तथ्य है कि सर्जक और भोक्ता अभिन्न होते हैं, क्योंकि अनुभूतियों की प्रामाणिक अभिव्यक्ति ही कविता होती है।

मैंने अपने इस लघु शोध-प्रबंध ‘अदम गोंडवी के काव्य में प्रतिरोध के स्वर’ को भूमिका और उपसंहार के अतिरिक्त चार अध्यायों में विभक्त किया है -

1- अदम और ग़ज़ल : एक परिचय
2- क्रांतिधर्मा-चेतना :सैद्धान्तिक पक्ष
3- अदम के काव्य में क्रांतिधर्मा-चेतना
4- अदम की साहित्यिक संरचना।

पहले अध्याय 'अदम और ग़ज़ल : एक परिचय' में अदम गोंडवी के जीवन और समय तथा ग़ज़ल की विकासात्मक यात्रा की प्रक्रिया के दौरान इसके मिज़ाज-परिवर्तन—सामयिक परिवेश के विशेष संदर्भ में—की प्रक्रिया का विवेचन संक्षिप्त में किया गया है। क्योंकि अदम गोंडवी ने ग़ज़ल के अलावा नज़्म भी लिखी है अतः इसका भी संक्षिप्त परिचय इसी अध्याय में दे दिया गया है। कुल मिलाकर पहला अध्याय अदम, ग़ज़ल और नज़्म की प्रकृति के परिचय का अध्याय है। अदम गोंडवी की ग़ज़लें और नज़्में क्रांतिकारी भाव-धारा और विचार-धारा से लैस हैं, और क्रांति की ओर कोई मनुष्य बहुत सोच-विचार कर बढ़ता है। इस सोचने–विचारने में उसकी चेतना-शक्ति उसे सहयोग प्रदान करती है। अतः दूसरे अध्याय 'क्रांतिधर्मा-चेतना : सैद्धांतिक पक्ष' में चेतना का परिचय, इसकी प्रकृति और मनुष्य को क्रांति की ओर प्रेरित करने में इसकी भूमिका, तथा क्रांतिकारी-साहित्य के सृजन में इसकी भूमिका के विवेचन-विश्लेषण का प्रयास किया गया है। यह एक सैद्धांतिक अध्याय है। उसके बाद इस सिद्धांत का उपयोग करते हुए तीसरे अध्याय 'अदम के काव्य में क्रांतिधर्मा-चेतना' में अदम के काव्य का उनकी राजनीतिक-चेतना, आर्थिक-चेतना, सामाजिक-चेतना, और सांस्कृतिक-चेतना के परिप्रेक्ष्य में विवेचन-विश्लेषण किया गया है। अदम ने अपने साहित्य के माध्यम से वर्तमान राजनीतिक-सामाजिक व्यस्थाओं का विरोध किया है। साहित्य प्रथमतः और अंततः एक विशेष शाब्दिक-संरचना है। इसी के माध्यम से कवि के भाव और विचार अभिव्यक्ति पाते हैं। अतः अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए कवि ने कैसे शब्दों का बरताव, किस प्रकार किया है इसका विवेचन-विश्लेषण भी महत्वपूर्ण होता है। अतः इस शोध का चौथा और अंतिम अध्याय 'अदम की साहित्यिक संरचना' में इसका भी विवेचन किया गया है।

इस शोध कार्य में आलोचनात्मक , तुलनात्मक, विवेचनात्मक, विश्लेषणात्मक, व्याख्यात्मक आदि शोध-प्रविधियों का प्रयोग किया गया है।

अब मैं उन लोगों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूँ जिन्होंने इस शोध कार्य को सम्पन्न करने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में मेरी मदद की है। सबसे पहले मैं अपने शोध-निर्देशक डॉ० अशोक नाथ त्रिपाठी का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ जिनके कुशल, स्नेहिल और विद्वतापूर्ण निर्देशन तथा सहयोग ने मेरी कई कठिनाइयों को आसान बना दिया। इन्होंने न सिर्फ़ मेरे नए विचारों और कुछ नए-से लगते शब्दों का स्वागत किया बल्कि उन्हें सही दिशा भी प्रदान की, इस पूरी प्रक्रिया में उनके गुरुवत्, पितृवत् और मित्रवत् स्नेहिल व्यवहार से मेरा नित-नित उत्साहवर्धन होता रहा ; अतः एक बार फिर से मैं उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। साहित्य-विभाग के अध्यक्ष प्रो०कृष्ण कुमार सिंह और

साहित्य-विद्यापीठ के अधिष्ठाता प्रो० सूरज पालीवाल का आभार जिनसे समय-समय पर बहुत कुछ सीखने को मिलता रहा है। साहित्य-विभाग के अन्य सभी गुरुजनों का आभार कि इनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहयोग मुझे मिलता रहा है। मैं अत्यंत आभारी हूँ साहित्य-विभाग का जिसने अदम गोंडवी पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन करके अदम की कविताओं पर कुछ विद्वानों के विचारों को सुनने का सुअवसर प्रदान किया। इस कार्य को पूरा करने में मेरे कुछ मित्रों का भी सहयोग मुझे प्राप्त हुआ है, उनके प्रति भी मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ। मैं अत्यंत आभारी हूँ अदम गोंडवी की पत्नी कमला देवी, उनके बेटे आलोक कुमार सिंह, उनके छोटे भाई केदारनाथ सिंह, भतीजे दिलीप कुमार सिंह का जिन्होंने अदम को समझने में मेरी काफ़ी मदद की है। अंत में उन सब लोगों का आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस शोध कार्य में मेरी मदद की है।

मैं अपने माता-पिता और भाई-बहनों को उनके स्नेहिल आशीर्वाद की कामना रखते हुए प्रणाम निवेदित करता हूँ , जो स्वयं मेरे जीवन की धुरी हैं। मैं अपने बाबा अमरनाथ यादव, चाचा श्याम बहादुर यादव और चाची विद्या देवी को भी प्रणाम निवेदित करता हूँ, जिनका स्नेहिल सहयोग समय–समय पर प्राप्त होता आया है।